Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
Volume-13, Issue-1, June 2019
Impact Factor: 4.081
www.researchguru.net

सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परम्परा और प्रयोगवादी आधुनिक कला

Social perspective of Tradition and Experimentation in Modern Art

डा0 अलका आर्य

अध्यक्षा–चित्रकला विभाग श्री स0ध0प्र0च0क0 स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रूड़की (हरिद्वार)

Email: arya.alka1@gmail.com

शोध सारांश

जब हम आधुनिक कला अथवा कलाकार की बात करते है, तो उसमें कहीं न कहीं परम्परा से जुड़े होने तथा उससे पृथक एक नवीन स्वरूप ग्रहण करने का आग्रह भी होता है। किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आधुनिक कला परम्परा विरोधी नवीन प्रयोगवादी कला के रूप में उभरकर हमारे सामने आ रही है, जिससे कलारूपों में अनाव"यक तोड़–मरोड़, विकृति और अमूर्त तत्वों का प्रयोग हो रहा है। ऐसी निरर्थक प्रयोगवादी कला की आड़ में अनुभवहीन, नौसिखिये कलाकार आधुनिक कला के नाम पर समाजं को गुमराह कर रहे हैं। इससे कला और समाज के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। जहॉ एक ओर मुक्त बाजार व्यवस्था और उपभोक्ता संस्कृति ने आधुनिक कलाकार की संवेदन"ाीलता को कुंठित कर दिया है, वहीं दूसरी ओर पि"चमी आधुनिकीकरण के प्रभाव से आज का युवा अपनी वैभवपूर्ण सांस्कृतिक सम्पदा के प्रति भावशून्य होता जा रहा है। इस दि"ाा में आधुनिक कलाकार एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। कलाकार का यह सामाजिक दायित्व बनता है, कि जिस समाज में वह पनपा है, उसे कुछ सार्थक दे सके।

प्रमुख शब्द : परम्परा, प्रयोगधर्मी, रूढ़िवादिता, सम्पोषित,

प्रस्तावना

ललित कलाएं जीवन को अभिव्यक्ति प्रदान करती है और अभिव्यक्ति मानव के संस्कार एवं परम्पराओं का प्रतिबिम्ब होती हैं। परम्परा ही समाज की रक्षक और कलाकार की चिरस्थायी कीर्ति बनकर युग का प्रतिनिधित्व करती है। वह कलाकार को प्रगति"ाील बना उसे आधार प्रदान करती है, जिससे वह भटक न जाये। आधुनिक भारतीय कला पुरातन काल से चली आ रही भारतीय परम्परा का ही अगला सोपान है क्योंकि प्रत्येक काल की कला अपने वर्तमान में आधुनिक होती है और समसामायिक परिवर्तनों के साथ आगे बढ़ती हुई अपने अतीत को प्राचीन के साथ समन्वित करती जाती है। इसीलिये आधुनिकता सतत् गति"ाील है[1] तथा परम्परा समाज को प्रगति"ाील बना एक सुदृढ़ आधार प्रदान करती है।

परम्परा का अर्थ एवं महत्व

परम्परा युगों –युगों से चली आ रही एक विचारधारा का मन्थन स्वरूप है। इसी मन्थन में अपने अतीत के अनुभवों की परम्परा को सींचा गया है। परम्परा का अर्थ प्रायः रूढ़िवादिता अर्थात ज्यों का त्यों हस्तान्तरण करने से लगाया जाता है, जबकि व्यापक रूप से इसका अर्थ श्रेष्ठ से श्रेष्ठ या उससे आगे बढ़ने से है। परम्परा में उन आद"ार्ो का उन्नयन होता है, जिन्हें समाज व्यापक दृष्टिकोण से स्वीकार करता है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह

परम्परा निरन्तर वर्तमान की आव"यकतानुसार परिवर्तन"ाील है।[2] वस्तुतः परम्परा का अर्थ अनुकरण नहीं बल्कि नया संकल्प है जो अपने युग की आव"यकता के अनुकूल अधिकाधिक स्फूर्त प्रेरणाओं और नवीन शक्तियों को स्वयं मे समाहित करती चली आती है। जब कलाकार अपनी पृष्ठभूमि से प्रेरणा ग्रहण करता है तो उसमे स्वाभाविक ही मौलिकता और निजस्व रहता है। निजस्व को बनाये रखने के लिये अपनी कला शैलियों और परम्पराओं में जाना पड़ेगा और रूढिबद्ध नियमों को तोडना भी पड़ेगा, जिससे नया सृजन हो। कलाकार की दृष्टि उसके परिवे"ा और वर्तमान अनुभवों से ही नहीं वरन् अपनी संस्कृति के कला इतिहास से भी परिष्कृत होती है। कला का एकमात्र आधार अन्वेषण नहीं, यदि ऐसा होता तो परम्परा शब्द के कोई मायने नहीं होते। अतः परम्परा का सम्बन्ध संस्कृति से अविच्छिन्न रूप से है और परम्परा पीढ़ी दर पीढ़ी अनुभवों का संचित कोष है। इसमें विकास तथा प्रगति का तत्व अनिवार्य है।[3]

परम्परा समाज की रक्षक, कलाकार की प्रेरणा बनकर युग का प्रतिनिधित्व करती गतिमान होती है। उसमें समाज को एकसूत्र मे बांधने की अटूट शक्ति होती है। अतः किसी दे"ा की कला तभी समृद्ध हो सकती है, जब वह परम्परा से जुड़ी हो, लचीली हो और दूसरे के भावों को सम्पोषित कर सकती हों। परम्परा में अद्भुत पूर्णता होती है, उसमें युगो–युगों से संचित सांस्कृतिक तत्व कलाकार के लिये नवीन प्रतिमान उपस्थित करते है, इसीलिये कलाकार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इससे जुड़ा रहता है। जब हम आधुनिक कला की बात करते हैं तो उसमें कहीं न कहीं परम्परा से जुड़े रहने और उससे पृथक एक नवीन स्वरूप ग्रहण करने की ओर ध्यान केन्द्रित करने का सतत् आग्रह होता है, क्योंकि आधुनिकता को परम्परा से विच्छिन्न करके नहीं देखा जा सकता। आधुनिकता एक ऐसी प्रक्रिया है जो परम्परा से आगे की ओर उन्मुख होती है। आद"ार्वादी ढंग से कहा जाये तो भारतीय परम्परा व्यक्तियों, समूहों, समुदायों तथा समाजों की प्रत्येक पीढी से यह अपेक्षा रखती है कि केवल विरासत मे प्राप्त अपनी परम्पराओं को ही नही ढोते रहेंगें, बल्कि इसमें कुछ जोडेंगे और जब–जब जरूरत पड़ेगी इसे बदलेंगे ताकि संस्कृति की धारा निरन्तर प्रवहमान रहें। निःसन्देह संस्कृति सदैव परिवर्तन"ाील है, चूंकि यह कभी न समाप्त होने वाला अविरल प्रवाह है, इसलिये जो कुछ धारा के पीछे से आ रहा है यह उससे भी अपना सम्पर्क नही तोड़ सकती।[4] यह एक ऐसी गत्यात्मकता है जो परम्राओं को स्वीकार करते हुए भी जीवन में परिवर्तन की सार्थकता को पूरी तरह से स्वीकार करती है। किसी भी संस्कृति एवं सभ्यता का स्थायित्व उसकी कला में निहित रहता है। भारतीय कला सदैव से ही धर्म, सत्य और नैतिक आद"ार्ो की संवाहिका रही है। कला व्यक्ति की चिरस्थायी कीर्ति और संस्कृति की अन"वर निधि ही नहीं अपितु उसकी प्रमुख प्रेरणा भी है। यदि हम प्राचीन भारतीय कला शैलियो पर दृष्टिपात करे तो ज्ञात होता है कि ये सभी शैलियॉ परम्परा से प्रभाव ग्रहण कर विकसित हुई संस्कृति मे रची बसी मौलिक शैलियॉ थीं। प्रभाव ग्रहण करने तथा अनुकरण करने में अन्तर है। यह अन्तर समझना आव"यक, जैसे गांधार कला ने ग्रीक कला का प्रभाव ग्रहण किया था न कि उसका अनुकरण। इसी प्रकार मुगल शैली मे भी पर्याप्त लोच इसीलिये है कि उसमें भारतीय और ईरानी शैली का मधुर समन्वय है।

ऐसे ही समन्वय को स्थापित कर हमारे यहॉ अनेक सृजन हुए। किन्तु 19वीं शताब्दी के बाद कला मे एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया और प्रयोगधर्मिता बढ़नें लगी। आधुनिक कलाकार आत्मकेन्द्रित होकर रूपांकन की नवीन पद्धतियों की ओर उन्मुख होने लगे, जिससे कला का स्वरूप प्रयोगवादी हो गया।

प्रयोगवादी कला

आज जबकि प्रत्येक कलाकार को व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त हो गई है तो यह भी सच है कि प्रत्येक चित्रकार एक ही तरह के विचारों पर आधारित चित्र नहीं बना सकता और यहीं से आधुनिक कला में प्रयोगवाद का आरम्भ होता है।[5]

चाहे कला हो या अन्य सामाजिक क्रिया–कलाप, आधुनिकता के प्रभाव में आज नित नूतन परिवर्तन और प्रयोंगों का ही बोलबाला हैं। रूपाकार सम्बन्धी समस्याओं पर इतना अधिक ध्यान दिया जा रहा है कि कलाकृतियॉ प्रयोग"ाला के अनुभवों की तरह लगने लगी है। वास्तव में प्रयोग आधुनिक कला के पर्याय बनते जा रहे है, जिस पर गंभीर एवं सघन रूप से विचार–विम"र्ा कर कदम उठाना चाहिये, कहीं यह मात्र फै"ान बनकर न रह जायें। अनेक आधुनिक कलाकार प्रयोगधर्मी और वि"िाष्ट कहलाने की होड़ में बहुत कुछ तकनीकी रूप से अनहोनी रचने की को"ि"ा करते हैं, जिसके पीछे उनका एकमात्र ध्येय यही जान पड़ता है कि कुछ ऐसा बनाया जाये जो किसी और ने न बनाया हो। आधुनिकता के नाम पर अनाव"यक रूप से तोड़–मरोड़ कर अति–अमूर्त चित्रों का सृजन कर तकनीकी रूप से एक सनसनाहट पैदा करने का यह व्यर्थ प्रयास है, जो जन–सामान्य की समझ से परे है और सामाजिक जीवन के साथ सही मायनों में उसका कोई सरोकार भी नजर नहीं आता। कभी–कभी ऐसा लगता है कि कलाकारों की एक भीड़ आज दि"ााहीन होकर मूल लक्ष्य से हटकर अंधेरे मे हाथ–पॉव मार रही है। आज का कलाकार आका"ा की ऊचाईयों को तो अव"य छूना चाहता है, पर धरती से उसका सम्बन्ध प्रायः छूटता जा रहा है, क्योंकि आधुनिक कलाकार का दृष्टिकोण मौलिकता और वैयक्तिकता के कारण धर्म, संस्कृति और परम्परा के पुराने प्र"नों से उतना नहीं रहा। आजकल वह मनोभावों, आवेगों, संवेगों, विज्ञान और प्रौद्यौगिकी जैसे मनुष्य को सीधे प्रभावित करने वाले सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सरोकारों से प्रेरित हैं।

कलाकार और समाज

सर्वविदित है कि जब कलाकार की प्रतिभा का परिपोषण ही सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत होता है तो भला उसकी कला सामाजिक जीवन से अप्रभावित या असम्बद्ध कैसे हो सकती है? आखिर कलाकृतियॉ कहीं तो प्रदर्"ात होती है, अतः उनका आसपास के वातावरण से तालमेल बैठाना भी आव"यक है। इसीलिये वस्तुनिरपेक्ष कला को प्रयोजनीयता से विमुक्त नहीं माना जा सकता। व्यक्ति और समाज को सार्थक व सुसंस्कृत बनाने में कला महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और संकट के समय समाज को एक कलाकार की कला के विभिन्न रूप उर्जा व स्फूर्ति देते हैं।[6] कलाकार अपनी कला के माध्यम से दे"ा और

समाज की संस्कृति और सभ्यता का स्तर ऊॅचा करने में योग देता है। जो कलाकार धन–पुरस्कार तथा सस्ती लोकप्रियता में स्वयं को और स्वयं की कला को भटकने नहीं देते वे स्वाभाविक रूप से अभिजात्य शासक वर्ग की अभिरूचि की परवाह न करके जनसाधारण के लिये उपयोगी सौन्दर्यबोध को अपनी कला मे व्यक्त करते हैं। इस अवस्था मे उनकी कलाकृति अपने आप सामाजिक प्रतिबद्धता का एक अंग बन जाती है।[7] यह सत्य है कि जीवन की अभिव्यक्ति करने वाली कला स्वयं जीवन के समान ही रहस्यपूर्ण है। जीवन की ही भॉति वह नियमों मे नही बंध सकतीं। अतः नित नवीन परिवर्तन और प्रयोग की दि"ाा मे आधुनिकता सदैव तत्पर रहती है। आधुनिक कला बींसवीं शताब्दी की परम्परा विरोधी व उत्तेजना भरी गतिविधियों की द्योतक हैं । आधुनिकता सदैव रूढ परम्परा का विरोध करती आई है तथा यह विरोध ही उसके अस्तित्व को आधार प्रदान करता है। जिस समाज मे असंतोष की हलचल और तड़पन होती है, वहीं नये विचार और आविष्कार जन्मते है और वहीं आधुनिकता भी पनपती है।[8] प्रायः देखा गया है कि धारा के विरूद्ध चलकर ही महान कला अवतरित होती है। यूरोप में भी आधुनिकता का उद्घोष परम्पराओं के विखण्डन के साथ हुआ। भारतीय समाज में भी आज ऐसी ही प्रवृत्तियॉ कला जगत में सक्रिय हो रही हैं। कुछ कलाकारों ने अमूर्तन को गंभीरता से लिया और उस पर नवीन प्रयोग भी किये। जहॉगीर सबावाला, सूर्यप्रका"ा गायतोंडे और नसरीन मौहम्मदी का नाम इस श्रंखला मे रखा जा सकता है। किन्तु आज अमूर्तन के नाम पर बिना विवेक के जो अंधाधुंध खिलवाड़ हो रहा है, उससे जनमानस में कला के प्रति उपेक्षापूर्ण वातावरण उत्पन्न हो गया है। कला के प्रति संवादहीनता इस खाई को और भी गहराये जा रही है।[9]

निःसंदेह आधुनिकता का अर्थ निरर्थक प्रयोग करना नहीं, वरन् अपनी जड़ों से जुड़कर शालीनता से सृजन करना है। यहॉ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि प्रयोगधर्मिता से कोई आपत्ति नहीं कर सकता, परन्तु इसके पीछे कोई ठोस आधारभूमि होनी चाहिये। मात्र नया करने के लिये ही प्रयोग नहीं होते, बल्कि सत्य को उजागर करने के लिये भी प्रयोग किये जाते है।[10] प्रयोग सदैव कला के लिये अपरिहार्य बने रहेगें और साथ ही प्रयोगों पर लगातार अध्ययन भी करना होगा। अपने अंतर्भावों का बोध कराने के लिये यह आव"यक नहीं कि आधुनिक अमूर्तन, विकृति और नवीन प्रयोगों को अनिवार्य रूप से अपनाया जाये। श्रेष्ठ कलाकृतियां परम्परागत होते हुए भी नवीन प्रेरणा भरने की क्षमता रखती हैं। आव"यकता इस बात की है कि शैली परम्परागत होते हुए भी उसमें नये मूल्यों की विवेचना हेा। जिन कृतियों की रचना द"ार्क को चौंकानें व चमत्कृत करने के उद्दे"य से की जाती हैं, वे सत्य से दूर होती है और मौलिकता के नाम पर समाज को उलझाती है। जो विगत है, वो व्यर्थ हो गया, और जो नया है वही अच्छा है, यह सोचना गलत है। आधुनिक कलाकार को सार्थक उद्दे"य के साथ ही सृजन करना चाहिये। रचना, नियम, कायदों और परम्राओं का मान रखते हुए सामाजिक पीड़ा के निदान के साथ–साथ नवीन जागृति हेतु कलाकृतियॉ रची जानी चाहिये। हमारे पास सृजन के अपने मौलिक स्रोत है, आव"यकता तो सिर्फ उन पर दृष्टिपात करने की है। साथ ही बाहरी प्रभावों को नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि भूमण्डलीकरण के कारण पूरी दुनियॉ को एक नजर में देखा जा

सकता है। इसलिये वि"व की कला गतिविधियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है और प्रभावों को ग्रहण भी करना चाहिये। बिना चारों ओर देंखें समझें नयी सृजन योजना नहीं बन सकती। आधुनिकता और समकालीनता के दबावों में बाजार और पि"चमी प्रभावों की नकल पर किये जा रहे कामों में क्या वह ताकत है जो जनता की रूचियों में जगह बना सकें ? यह तब होगा जब हमारी कला निर्मितियॉ जनता के लोकाचार, जन–जीवन, उनकी संवेदनाओं और आकांक्षाओं का हिस्सा बनेंगी।

निष्कर्ष

अतः भविष्य में वे ही कला या कलाकार अक्षुण्ण बने रह सकते है जो समाज और कला की नवीन चुनौतियों का सामना कर सकें तथा दे"ा की संस्कृति व कला गौरव को भी बनाये रखने के प्रति कृत संकल्प हो। कलाकार का यह सामाजिक दायित्व बनता है कि जिस समाज में वह पनपा है, उसे कुछ सार्थक दे सकें। यह भारतीयता ही आम जन का द"ान है, उसकी सांस्कृतिक अस्मिता है कि कोई कला यदि समाज निरपेक्ष रही है, तो वह आज नहीं तो कल अपने ही घेरे में बन्द होकर दम तोड़ देगी , जबकि व्यापक जन सरोकारों से जुडी कला हमे"ाा ही जीवित रहेंगी, क्योकि वह उस समाज के जीवन का प्रतिनिधित्व करती है। अतः आधुनिक कला के पुनरूद्धार का प्रयास तभी सफल हो सकता है जब परम्परा और प्रयोग के साथ सामाजिक सरोकारों का मधुर सामंजस्य भी हो।

सन्दर्भ–

1) राठी, रामानन्द,(1985) कला के सरोकार, रचना प्रका"ान, जयपुर पृ0 39

2) मावडी, मोहन सिंह, (2002) भारतीय कला सौन्दर्य, तक्षि"ाला प्रका"ान, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण पृ0 78

3) Haldar, Asit Kumar , (1952) Art and tradition, univarsal publisher lucknow P-11

4) राय, निहार रंजन, (1984) भारतीय कला के आयाम, पूर्वोदय प्रका"ान, दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ0 166–167

5) शुक्ल, रामचंद्र (1958) कला और आधुनिक प्रवृत्तिया, प्रका"ान सूचना विभाग उ0प्र0, प्रथम संस्करण, पृ0 161

6) समकालीन कला, (2003) अंक 24, ललित कला अकादमी , रविन्द्र भवन, नई दिल्ली, पृ0 54

7) Pranav Ranjan Ray, (Sept.1977-April 1978) Lalit Kala Contemporary pg- 24–25

8) शुक्ल, रामचंद्र,पद्मश्री रामगोपाल विजयवर्गीय अभिनन्दन ग्रंथ, रुपांकन सम्पादक डा0 हरि महर्षि जयपुर, रामगोपाल विजयवर्गीय अभिनन्दन समिति 1991, प्रथम संस्करण, पृ0 26

9) विरंजन, राम (2003) समकालीन भारतीय कला, निर्मल बुक एजेन्सी, कुरूक्षेत्र हरियाणा, प्रथम संस्करण, पृ0 12

10) वही, पृ0 13